

रेडियोधर्मियों की कहानी - आरंभ से अब तक

अनुसंधान एवं उत्पादन में जुटा परमाणु ऊर्जा विभाग



डॉ. पर्णिका दास

परिवर्ती ऊर्जा साइक्लोट्रॉन केंद्र, कोलकाता

रेडियोधर्म शब्द का संबंध किसी धर्म विशेष मानने वाले मनुष्यों अथवा समुदाय से नहीं, बल्कि 'रेडियो-समस्थानिकों' से है जिनका उपयोग वर्तमान में अनेक क्षेत्रों जैसे कि, चिकित्सा, अनुसंधान, कृषि, उद्योगों, इत्यादि में बहुतायत से हो रहा है, और जिनके बारे में परिचित होना जन-सामान्य के लिए भी उतना ही आवश्यक है जितना कि वैज्ञानिक समुदाय के लिए। प्रस्तुत लेख का मुख्य उद्देश्य इन रेडियोधर्मियों से परिचित कराना ही है। एक वाक्य में कहा जाए तो, परमाणु के वे नाभिक जो विकिरण (रेडिएशन) उत्सर्जित करते हैं, उन्हें रेडियोधर्मियों के नाम से जाना जाता है। अब हमारे मन में अनेक प्रश्न उठते हैं, जैसे कि, कौन-कौन से परमाणु नाभिक रेडियोधर्मियों होते हैं? इनकी कुल संख्या कितनी है? रेडियोधर्मिता की खोज कैसे और कब हुई? विकिरण उत्सर्जित करने वाले इन स्रोतों का उत्पादन कैसे होता है? इनके उत्पादन, उपयोगों एवं प्रबंधन में परमाणु ऊर्जा विभाग की क्या भूमिका है? इन सब प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए, आइए, महान वैज्ञानिक एंटोनी हेनरी बेकरेल से शुरू करते हुए रेडियोसमस्थानिकों और रेडियोधर्मिता से जुड़ी इस रोचक और ऐतिहासिक कहानी को प्रारंभ करते हैं।

समय था वर्ष 1896 का जब प्रोफेसर एंटोनी हेनरी बेकरेल पेरिस स्थित 'नेशनल म्यूजियम ऑफ नेचुरल हिस्ट्री' (म्यूजियम नेशनल द' हिस्ट्वॉर नेचुरल) में कार्यरत थे। यह केवल एक प्रदर्शनी केंद्र ही नहीं था, बल्कि उसमें अनुसंधान प्रयोगशालाएँ भी थीं। प्रोफेसर बेकरेल उस समय प्रतिदीप्ति

(फ्लोरोसेंस) एवं स्फुरदीप्ति (फॉस्फोरेसेंस) जैसे विषयों पर अध्ययनरत थे। वे उस समय यूरेनियम के लवणों (सॉल्ट्स) पर भी अध्ययन कर रहे थे। उनका अनुमान था कि सूर्य के प्रकाश से यूरेनियम 'ऊर्जा' प्राप्त करेगा जिसका प्रभाव फोटोग्राफिक कागज पर पड़ेगा। जब वे इस अध्ययन की योजना बना रहे थे, संयोगवश तब सूर्य के प्रकाश के अभाव के कारण, उन्होंने यूरेनियम लवण को काले कागज में लपेट कर अलमारी के अंदर एक फोटोग्राफिक प्लेट के पास अंधेरे में रख दिया। कुछ दिनों बाद जब उस फोटोग्राफिक प्लेट को निकाला गया और उसका विकास किया, तो उन्हें प्लेट पर धब्बे दिखे। उन्होंने समान प्रयोग को दोहराया। उन्होंने यूरेनियम लवण को फोटोग्राफिक प्लेट पर रखा और उसे अंधेरे स्थान पर रख दिया। इस बार भी फोटोग्राफिक प्लेट पर यूरेनियम लवण का प्रभाव धब्बों के रूप में दिखाई दिया। यूरेनियम के भिन्न-भिन्न लवणों को लेकर परीक्षण करने के बाद उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि सूर्य के प्रकाश के बिना भी यूरेनियम द्वारा ऐसी किरणें उत्सर्जित होती हैं, जो फोटोग्राफिक प्लेटों को प्रभावित कर सकती हैं। यह घटना, रेडियोधर्मिता (रेडियोएक्टिविटी) की खोज मानी जाती है। परंतु, उस समय यह ज्ञात नहीं था कि इन रहस्यमय किरणों का संबंध परमाणु के नाभिक से है।

आने वाले वर्षों में ऐसे पदार्थों की खोज जारी रही और प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले विकिरणशील पदार्थों पर अध्ययन भी चलता रहा। वर्ष 1899 में वैज्ञानिक अर्नेस्ट रदरफोर्ड ने इन विकिरणों की अल्फा (α) और बीटा (β)

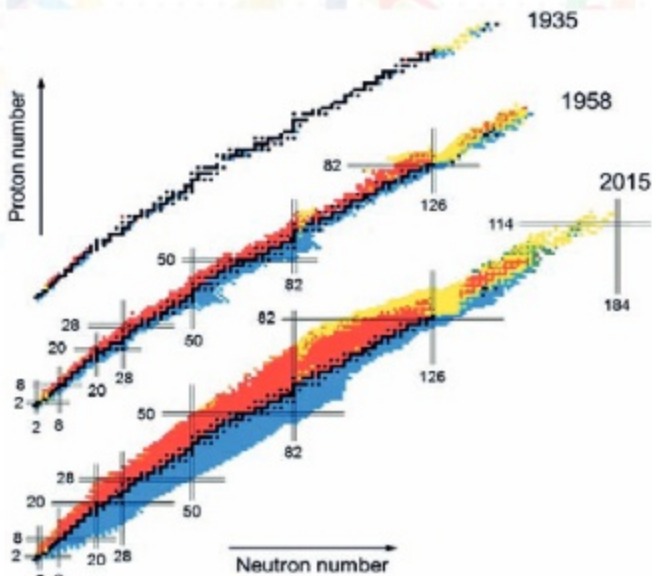
कणों के रूप में पहचान की और उन्हें नाम दिया। वर्ष 1911 में, जब वैज्ञानिक अर्नेस्ट रदरफोर्ड ने अपने सहयोगियों, गीगर (जोहान्स विल्हेम हेंस गीगर) एवं मासर्डेन (सर अर्नेस्ट मासर्डेन) के साथ मिलकर धनावेशित अल्फा किरणपुंज को एक पतली सोने की पन्नी पर डालकर प्रकीर्णित अल्फा कणों का अध्ययन किया तो अप्रत्याशित परिणाम प्राप्त हुए। अधिकांश अल्फा कण बिना किसी विचलन के ही सोने की पन्नी के पार हो गए, जबकि कुछ अल्फा कण बड़े कोणीय मान पर विचलित हुए। लगभग हजारों कणों में से एक कण अत्यधिक विचलन के साथ लगभग विपरीत दिशा में लौट आया। प्रयोग को अनेक बार दोहराने पर भी इस अवलोकन में कोई बदलाव नहीं हुआ। यह आश्चर्यजनक था क्योंकि सोने की परत ठोस लग रही थी, फिर भी अधिकांश अल्फा कण बिना किसी विचलन के पार हो गए। रदरफोर्ड और भी अधिक हैरान थे क्योंकि कुछ कण अप्रत्याशित रूप से किरण भेजने की दिशा में वापस लौट आए। स्वयं रदरफोर्ड के शब्दों में यह घटना ऐसी थी, 'मानो आपने 15 इंच का तोप का गोला किसी टिशू पेपर पर दागा हो और वह लौटकर आपको ही लग गया हो।' इस अवलोकन के आधार पर रदरफोर्ड ने परमाणु का एक नया मॉडल प्रस्तावित किया। उन्होंने बताया कि परमाणु का सम्पूर्ण धनावेश और अधिकांश द्रव्यमान परमाणु के भीतरी भाग में एक अत्यंत छोटे से क्षेत्र में सघन रूप से केंद्रित होता है, जिसे उन्होंने नाभिक (न्यूक्लियस) नाम दिया। इसी के साथ 'नाभिकीय भौतिकी' का भी जन्म हुआ।

कालान्तर में, जब कण त्वरकों का विकास हुआ और इन त्वरकों से प्राप्त उच्च-ऊर्जा कणों (प्रक्षेप्य) को विभिन्न पदार्थों के नाभिकों (लक्ष्य) पर प्रक्षेपित किया गया, तो लक्ष्य अथवा प्रक्षेप्य से अलग विभिन्न नए तत्वों का निर्माण हुआ, जिनमें से कुछ विकिरण उत्सर्जित करने वाले थे। रहस्यमय नाभिक को समझने के प्रयास में वैज्ञानिकों ने त्वरकों (एक्सिलरेटर्स), संसूचकों (डिटेक्टर्स) एवं अनेक उन्नत

तकनीकों का विकास किया। प्रख्यात वैज्ञानिक नील्स बोहर ने परमाणु संरचना का एक नया मॉडल प्रस्तुत किया, जिसके अनुसार, इलेक्ट्रॉन परमाणु के नाभिक के चारों ओर निश्चित ऊर्जा स्तरों (कक्षाओं) में गतिशील रहते हैं। बोहर द्वारा दिए गए परमाण्वीय मॉडल से रदरफोर्ड का नाभिकीय परमाणु मॉडल संवर्धित हुआ। यूरेनियम से उत्सर्जित किरणें एवं अन्य तत्वों द्वारा विकिरण उत्सर्जन, अर्थात् 'रेडियोधर्मिता' के प्रयोगों और इन मॉडलों के आधार पर इस बात की पुष्टि हुई कि रेडियोधर्मिता परमाणु के नाभिक से उत्पन्न होती है।

अब हम अपने पहले प्रश्न पर वापस आते हैं कि कौन से परमाणु नाभिक रेडियोधर्मी होते हैं? इस विषय को समझने के लिए भी ऐतिहासिक वर्णन की आवश्यकता है। वैज्ञानिक जॉर्जियो फिया ने आज से 90 वर्ष पहले, 1935 में तब तक ज्ञात 327 नाभिकों की पहली संग्रहीत सूची प्रकाशित की। इसमें उन्होंने, ऊर्ध्वाधर दिशा (वर्टिकल डायरेक्शन) में प्रोटॉन संख्या और क्षैतिज दिशा (हॉरिजॉन्टल डायरेक्शन) में न्यूट्रॉन संख्या को दिखाया। इस पहली सूची में अगले 85 वर्षों में जो विस्तार हुआ, उसे चित्र-1 में दिखाया गया है। काले रंग में दिखाए गए नाभिक स्थायी हैं। चित्र-1 से स्पष्ट है कि पहले नाभिकीय चार्ट में ज्ञात नाभिकों में से अधिकतर स्थायी थे। नाभिकीय भौतिकी के शोध यह दर्शाते हैं कि स्थायी नाभिक में न्यूट्रॉन और प्रोटॉन की संख्या में संतुलन आवश्यक है। स्थायी नाभिकों में, जिनकी प्रोटॉन या न्यूट्रॉन संख्या विशेष होती है, जैसे 2, 8, 20, 28, 50, 82 और 126, वे सामान्य नाभिकों की तुलना में और अधिक स्थायी होते हैं और मैजिक नाभिकों के रूप में जाने जाते हैं। चित्र-1 में मैजिक परमाणु नाभिकों को भी चिह्नित किया गया है।

यदि किसी नाभिक में प्रोटॉन (Z) और न्यूट्रॉन (N) का अनुपात स्थायी नाभिक संतुलन से बहुत अधिक या बहुत कम होता है, तो वह अस्थायी नाभिक हो जाता है और



चित्र-1 नाभिकीय चार्ट नाभिकों को प्रोटॉन संख्या (Z) और न्यूट्रॉन संख्या (N) के अनुसार व्यवस्थित किया गया है। काला रंग स्थायी नाभिक दर्शाता है। अन्य रंग रेडियोधर्मी क्षय को दर्शाते हैं। लाल रंग वाले प्रोटॉन-समृद्ध नाभिक इलेक्ट्रॉन कैप्चर (EC) अथवा पॉज़िट्रॉन (बीटा-प्लस; β^+) क्षय करते हैं। नीले रंग वाले न्यूट्रॉन-समृद्ध नाभिक बीटा (β^-) क्षय करते हैं। पीले रंग वाले नाभिक अल्फा (α) विकिरण उत्सर्जक होते हैं। अंकित 'N' और 'Z' 'मेजिक नाभिक' को चिह्नित करते हैं। (चित्र-1 का ऑनलाइन स्रोत: <https://link.springer.com/article/10.1140/epja/s10050-020-00046-7/figures/1>).

अधिकांशतः विकिरण उत्सर्जन द्वारा अधिक स्थायी नाभिक में परिवर्तित होता है। ऐसे अस्थायी नाभिक ही रेडियोधर्मी नाभिक कहलाते हैं। चित्र-1 से स्पष्ट है कि काले रंग से चिह्नित स्थायी नाभिकों की संख्या अपेक्षाकृत कम है। वर्तमान में, लगभग 3300 से अधिक नाभिक ज्ञात हैं, जिनमें से अधिकतर रेडियोधर्मी हैं।

केवल कुछ ही रेडियोधर्मी नाभिक (रेडियोआइसोटोप) प्राकृतिक रूप से पाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त, सभी रेडियोधर्मी नाभिक कृत्रिम रूप से परमाणु रिएक्टर या कण-त्वरकों (पार्टिकल एक्सिलरेटर्स) में उत्पन्न किए जाते हैं। इन रेडियोधर्मी नाभिकों की खोज के साथ ही, वैज्ञानिकों द्वारा उनका विस्तृत अध्ययन सतत जारी है और उनके गुणधर्मों का अध्ययन, उत्पादन तथा उनके अनुप्रयोग, अनुसंधान के महत्वपूर्ण विषय बने हुए हैं।

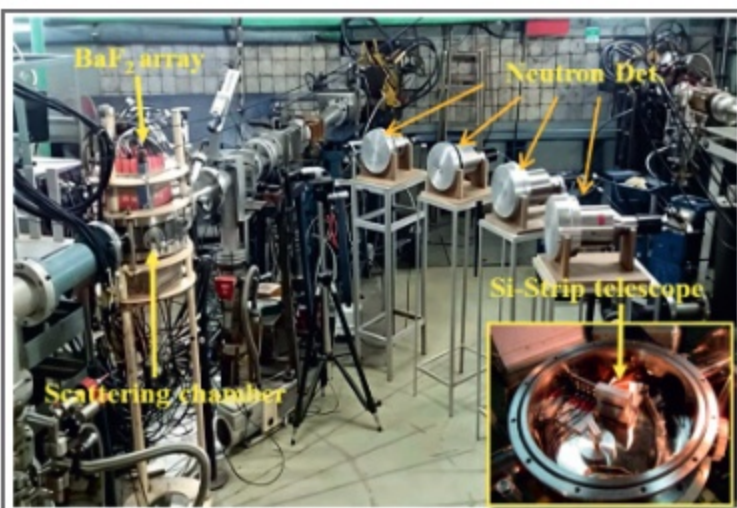
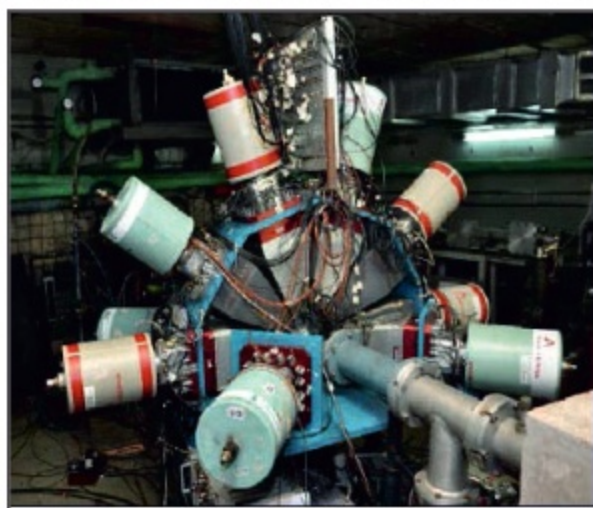
भारतीय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के संस्थापक एवं प्रमुख शिल्पकार डॉ. होमी जहाँगीर भाभा का मानना था कि परमाणु विज्ञान के क्षेत्र में उच्चस्तरीय अनुसंधान केवल बौद्धिक जिज्ञासा की पूर्ति के लिए ही नहीं, बल्कि देश के दीर्घकालिक तकनीकी एवं औद्योगिक विकास के लिए भी अत्यंत आवश्यक है। उनकी इस दूरदर्शी सोच को साकार करने की दिशा में डॉ. राजा रामन्ना ने देश में एक विशाल साइक्लोट्रॉन (एक प्रकार का कण त्वरक) स्थापित करने की परिकल्पना की ताकि भारतीय वैज्ञानिक देश में ही उच्चस्तरीय अनुसंधान कर सकें और भारत अपने स्वयं के प्रशिक्षित, सक्षम और आत्मनिर्भर विशेषज्ञ तैयार कर सकें। प्रख्यात खगोल-भौतिकज्ञ डॉ. मेघनाद साहा ने 1930 के दशक के उत्तरार्ध और 1940 के दशक में भारत में साइक्लोट्रॉन-आधारित अनुसंधान सुविधा स्थापित करने की परिकल्पना एवं और इसकी आवश्यकता का उल्लेख किया है। इस महत्वाकांक्षी विचार को मूर्त रूप देने के लिए साइक्लोट्रॉन निर्माण के प्रारंभिक एवं अग्रणी प्रयास डॉ. बिधु भूषण नागचौधुरी ने किए। संभवतः इसी प्रयास को आगे बढ़ाते हुए, डॉ. राजा रामन्ना की अध्यक्षता वाली समिति की वर्ष 1964 की सिफारिशों तथा वर्ष 1965 में परमाणु ऊर्जा आयोग द्वारा साइक्लोट्रॉन (K-130) परियोजना को स्वीकृति दी गई। तत्पश्चात, वर्ष 1969 में, कोलकाता (तत्कालीन कलकत्ता) में साइक्लोट्रॉन की स्थापना की दिशा में कार्य प्रारंभ हुआ। उस समय साइक्लोट्रॉन निर्माण की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आवश्यक तकनीकी आधारभूत संरचना भारत में उपलब्ध नहीं थी। 16 जून 1977 को परिवर्ती ऊर्जा साइक्लोट्रॉन केंद्र (वेरिबल एनर्जी साइक्लोट्रॉन सेंटर, VECC), कोलकाता में प्रथम स्वदेशी साइक्लोट्रॉन की स्थापना हुई। इसे, K-130 कक्ष-ताप साइक्लोट्रॉन (रूम टेम्परेचर साइक्लोट्रॉन; RTC) के नाम से भी जाना जाता है। वैज्ञानिकों के असाधारण परिश्रम एवं संघर्ष से परियोजना के दौरान आई अनेक कठिनाइयों को दूर किया गया। आरंभिक वर्षों में इस सुविधा से केवल हाइड्रोजन, ड्यूटेरॉन और अल्फा कणपुंजों को ही प्राप्त किया

जा सका। तत्पश्चात, भारी आयनों को त्वरित करने की सुविधा भी विकसित की गई। वर्तमान में, यह त्वरक विभिन्न विकिरणों को उपलब्ध कराने में सक्षम है, जिनमें प्रोटॉन (ऊर्जा परास: 7 से 15 MeV), ड्यूटेरॉन (ऊर्जा परास: 14 से 25 MeV), अल्फा कण (ऊर्जा परास: 26 से 55 MeV) तथा भारी आयन किरणें (ऊर्जा परास: 7 से 10 MeV) शामिल हैं।

कठिन चुनौतियों के बावजूद, K-130 साइक्लोट्रॉन की सफलता ने वैज्ञानिकों एवं अभियंताओं का मनोबल बढ़ाया और उन्हें अतिचालक साइक्लोट्रॉन (सुपरकंडक्टिंग साइक्लोट्रॉन) जैसी अधिक चुनौतीपूर्ण परियोजना हेतु प्रेरित किया। बारह वर्षों के समर्पित प्रयासों के बाद, 25 अगस्त 2009 को प्रातः 4 बजे सुपरकंडक्टिंग साइक्लोट्रॉन में पहली बार आंतरिक किरण (इंटरनल बीम) का सफलतापूर्वक अवलोकन किया गया। सुपरकंडक्टिंग साइक्लोट्रॉन से पहली बाह्य किरण नाइट्रोजन-14 आयनों (ऊर्जा 252 MeV) के रूप में प्राप्त की गई। वर्तमान में, यह साइक्लोट्रॉन नाइट्रोजन, ऑक्सीजन, आर्गन और क्रिप्टॉन आयनों को विभिन्न आवेश अवस्थाओं में त्वरित कर, उनकी किरणें अनुसंधान हेतु उपलब्ध करा रहा है।

इन दो साइक्लोट्रॉनों से प्राप्त आवेशित त्वरित कणों को

विभिन्न लक्ष्यों पर प्रक्षेपित कर, नाभिकीय अभिक्रिया द्वारा, स्थायित्व-रेखा के प्रोटॉन-समृद्ध पक्ष के समस्थानिकों का उत्पादन किया जाता है। साइक्लोट्रॉन से प्राप्त किरण के प्रकार, उसकी ऊर्जा तथा लक्ष्य नाभिक के आधार पर विभिन्न रेडियोधर्मी समस्थानिकों का उत्पादन किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, सुपरकंडक्टिंग साइक्लोट्रॉन (SCC) से प्राप्त 231 MeV ऊर्जा के नाइट्रोजन कणों को रोडियम (^{103}Rh) लक्ष्य पर प्रेरित नाभिकीय अभिक्रिया के लगभग एक घंटे के बाद, उपस्थित रेडियोधर्मी नाभिकों में ^{104}Cd , ^{103}Ag , ^{104}Ag , ^{105}Ag , ^{99}Pd , ^{100}Pd , ^{101}Pd , ^{97}Rh , ^{99}Rh , ^{101}Rh , ^{95}Ru , ^{97}Ru , ^{94}Tc , ^{95}Tc , ^{97}Tc , इत्यादि शामिल हैं। साइक्लोट्रॉन द्वारा उत्पादित रेडियोधर्मी नाभिकों के गुणधर्मों को समझने और उनके व्यवहार का गहन अध्ययन करने के लिए वी.ई.सी.सी. कोलकाता में उन्नत एवं अत्याधुनिक संसूचकों (डिटेक्टरों) का विकास किया गया है और ऐसे दो संसूचकों (डिटेक्टरों) को चित्र-2 में दर्शाया गया है। वी. ई. सी. सी. में रेडियोधर्मी आयन कणपुंज (रेडियोएक्टिव आयन बीम; RIB) सुविधा भी उपलब्ध है, जहाँ कक्ष-तापीय साइक्लोट्रॉन में नाभिकीय अभिक्रियाओं के फलस्वरूप उत्पन्न रेडियोधर्मी नाभिकों



चित्र-2 (बाएं) क्लोवर (CLOVER) एवं LEPS डिटेक्टरों सहित INGA सरणी (ऐरे), (दाएं) BaF_2 सरणी (ऐरे), न्यूट्रॉन डिटेक्टरों और सिलिकॉन (Si)-स्ट्रिप टेलीस्कोप युक्त प्रायोगिक सुविधा

को पुनः त्वरित कर कणपुंज के रूप में प्रयोगों के लिए उपयोग में लाया जाता है।

रेडियोसमस्थानिकों के विज्ञान, चिकित्सा, उद्योग तथा कृषि सहित विभिन्न क्षेत्रों में अनेक महत्वपूर्ण अनुप्रयोग हैं। इन्हें ध्यान में रखते हुए, वी.ई.सी.सी. के अंतर्गत चिकित्सकीय साइक्लोट्रॉन (मेडिकल साइक्लोट्रॉन) कार्यक्रम शुरू हुआ। 18 सितंबर 2018 को, वी.ई.सी.सी. में 30 MeV क्षमता के मेडिकल साइक्लोट्रॉन का परिचालन शुरू हुआ। चित्र-3 में कोलकाता स्थित साइक्लोन-30 साइक्लोट्रॉन दिखाया गया है। इसके द्वारा फ्लुओरो-डीऑक्सीग्लूकोज (^{18}F -FDG) रेडियोभेषज (रेडियो-फार्मास्यूटिकल) का उत्पादन किया जाता है और कैंसर की पहचान एवं कैंसर रोगियों के निदानात्मक परीक्षणों के लिए नियमित रूप से निकटवर्ती अस्पतालों तक पहुँचाया जाता है। इसके अतिरिक्त, नए रेडियोसमस्थानिकों के उत्पादन, रसायनिक प्रसंस्करण तकनीकों तथा उन्नत उत्पादन विधियों को विकसित किया जा रहा है। इन प्रयासों से $^{68}\text{Ge}/^{68}\text{Ga}$ जनित्र (जनरेटर) तथा थैलियम (^{201}Tl) के उत्पादन में सफलता प्राप्त हुई है।



चित्र-3 VECC कोलकाता (चाकगड़िया परिसर) में स्थित चिकित्सकीय साइक्लोट्रॉन (Cyclone 30)

भारत में अधिकतम रेडियोसमस्थानिकों की आपूर्ति परमाणु ऊर्जा विभाग द्वारा की जाती है। विभिन्न रेडियोसमस्थानिक जैसे कि, टेक्नीशियम ($^{99\text{m}}\text{Tc}$), आयोडीन (^{131}I), कोबाल्ट (^{60}Co), फ्लोरीन (^{18}F), कार्बन (^{14}C), सीज़ियम (^{137}Cs),

इत्यादि परमाणु ऊर्जा विभाग की इकाइयों में उत्पादित होते हैं। नाभिकीय रिएक्टरों में न्यूट्रॉन-समृद्ध समस्थानिक और साइक्लोट्रॉनों में प्रोटॉन-समृद्ध समस्थानिक उत्पन्न किए जाते हैं। वर्तमान में, 23 चिकित्सकीय साइक्लोट्रॉन कैंसर निदान एवं उपचार हेतु उपयोग में आने वाले रेडियोसमस्थानिकों का उत्पादन कर रहे हैं। रेडियोसमस्थानिकों की भविष्य में बढ़ती मांग को ध्यान में रखते हुए, विभिन्न प्रगत अनुसंधान एवं आइसोटोप उत्पादन रिएक्टरों का विकास किया जा रहा है। नए समस्थानिकों की खोज एवं उनके उत्पादन से संबंधित अध्ययन, रसायनिक प्रसंस्करण तकनीकों, रेडियोधर्मियों के मानव कल्याण हेतु शांतिपूर्ण उपयोग, विभाग में किए जा रहे अनुसंधान एवं विकास कार्यों का एक प्रमुख विषय है।



लेखिका का परिचय



डॉ. (श्रीमती) पर्णिका दास

डॉ. (श्रीमती) पर्णिका दास वर्तमान में, परमाणु ऊर्जा विभाग के कोलकाता स्थित परिवर्ती ऊर्जा साइक्लोट्रॉन केंद्र (वीईसीसी) में अध्यक्ष, निम्न तापीय ट्रैप एवं नाभिकीय स्पेक्ट्रोस्कोपी अनुभाग तथा डीन, अकादमिक, भौतिकी विज्ञान, होमी भाभा राष्ट्रीय संस्थान के पद पर कार्यरत हैं।